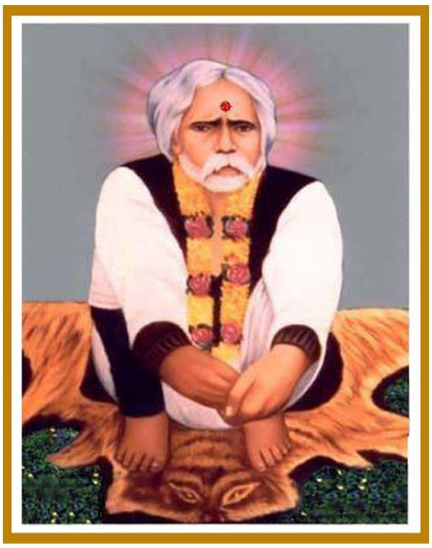

OM SHRI GURU PARAMATMANE NAMAH

MANOHAR JIVAN DARSHAN

SHRI SHRI 1008 SHRI MANOHAR DAS AGHORI

जनम (प्रगटीकरण) - Birth (Manifestation)
भाद्रपद शुक्ला - Bhadrapada Shukla
जलझुलनी एकादशी - Jaljulni Ekadashi
रात्रि ११ बजे पुष्य नक्षत्र में - 11 pm in the constellation Pushya
सम्वत् १९५२ (सन् 1894) - Samvat 1952 (AD 1894)

सत्यलोकवास (निर्वाण) - Satyalokwas (Nirvana)
अगहन सुदी ६ मंगलवार - Agahan Sudi 6 Tuesday
सुबह ५ बजे - 5 am
सम्वत् २०१५ (16 दिसम्बर 1958) - Samvat 2015 (16 December 1958)

WWW.AGHORI.IT

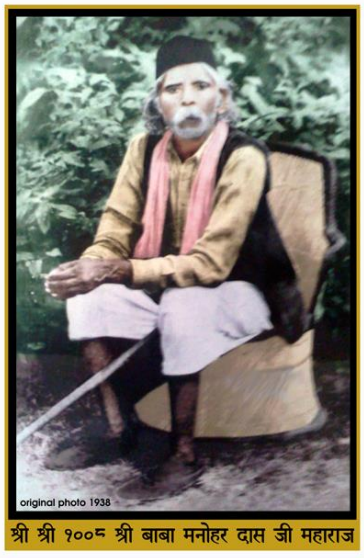

श्री श्री १००८ श्री बाबा मनोहर दास जी महाराज

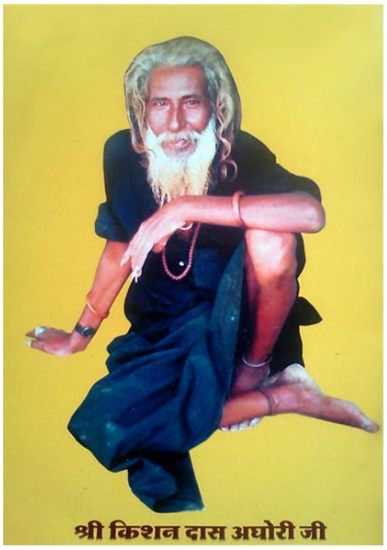
श्री किशन दास अघोरी जी

This book is the cleaning job done on photocopies of an original book,
now unobtainable, recovered by Radhika Dasi Aghori.
Some parts of the book were not legible necessitating a restoration.

In memory of Baba Manohar Das Ji, Baba Kishan Das Aghori guru's.

With love and devotion
Govinda Das Aghori

Questo libro è il lavoro di pulizia fatto su delle fotocopie di un libro originale,
ormai introvabile, recuperato da Radhika Dasi Aghori.
Alcune parti del libro non erano ben leggibili rendendo così necessario un restauro.

In ricordo di Baba Manohar Das Ji guru di Baba Kishan Das Aghori.

Con amore e devozione
Govinda Das Aghori

अध्याय-16

॥ ॐ श्री गुरु परमात्मने नमः ॥

बाबा मनोहरदास जीवन-दर्शन

सर्वात्मवादी सच्चे महात्मा

बाबा श्री मनोहरदास जी महाराज ने मत मतान्तरों के झगड़ों को सर्वथा त्याग दिया था और ''सर्वात्मावाद'' को अपना लिया था, तो उन्हें कण-कण में गुरुमहाराज के दर्शन होते थे, उनकी दृष्टि में ''कंकर-कंकर शंकर'' था। कभी-कभी विचरण करते समय उन्हें कोई पशु या पक्षी की हड्डी दिखाई दे जाती तो उसे'' गुरुजी की हड्डी कहते हुए उठा लेते और अपने आश्रम पर ले आते उसे जल तथा दूध से स्नान कराके वड़े प्रेम से अपने पास रखते थे। उनका एक भक्त अपने संस्मण सुनाते हुए कहता है–

''एक बार कोटापट्टी के बांध पर जंगल में 'हुजूर' अपनी धुन में चले जा रहे थे, उनके पीछे-पीछे में (बौलत पहलवान) चला जा रहा था। अचानक एक पशु की हड्डियों का सूखा ढांचा दिखाई पड़ा। बोले–''अरे छोरा! यह गुरुजी की हड्डी है इसे उठा'' मैंने आज्ञा का पालन किया और एक डलिया में उन्हें भर लिया। धूना पर लाकर पहले दामोदर जी महाराज के कुएं के जल से स्नान कराया तथा दूध से स्नान कराके अपने आश्रम में रख लिया। उन्हें किसी मजहब से पक्षपात नहीं था उनकी शिक्षाएँ सर्वजनीन थीं। वे हिन्दू मुसलमान, सिख, ईसाई सेवकों के लिए एक दृष्टि से देखते थे। सभी धर्मों के लोग उन्हें एक सच्चे फकीर की तरह आदर देते थे। उनका सम्मान करते थे। उनकी वाणियों को सुनकर धन्य होते उनके सत्संङ्ग से लाभ उठाते थे। प्राणी मात्र का कल्याण कर उन्हें सुखी करना और हनेशा ईश्वर के चिन्तन में मग्न रहते ही उनका मजहव था। ऐसे समदर्शी और सर्वात्मावदा महापुरुष इस संसार में बड़े दुर्लभ होते हैं, उनकी रहनी-सहनी सीधी सरल एवं उनके विचार भी सीधे सरल तथा अज्ञानान्धकार को दूर करने के लिए सूर्य प्रभावित थे, वनावटीपन तथा दिखावा उनके जीवन में कभी नहीं देखा गया उनके व्यक्ति ज्यों-ज्यों ऊपर उठता है उसके साथी ही बाहरी आडम्बर समाप्त होता जाता है वे सच्चे अर्थों में महान संत थे क्योंकि उनके विचारों की उच्चता के साथ ही सादगी के दर्शन होते थे। बाहरी ठोंग एवं प्रदर्शन उनके जीवन में दूर-दूर तक दिखाई नहीं देता था। वे साधारण वेश-भूषा में अपार गुणों से विभूषित महामानव थे। बाह्याडम्वर और दिखावे का उनमें सर्वधा अभाव था। माला तिलक रंगे वस्त्र तथा अन्य पंथिक-पहिचानों को वे साधता के लिए आवश्यक नहीं मानते थे। अपने सेवक दौलत पहलवान (किडंडू) से एक दिन आप बोले–''किड्डू देख तोय रंगे स्यार दिखाउँ बात यूँ थी कि एक दिन

भगवावस्त्रों वाले संन्यासियों की एक जमात वहाँ से गुजर रही थी। उन्हें देखकर उन्होंने उपर्युक्त विचार प्रकट किये। वे संत होना और संत दिखाई देना दोनों से संत दिखाई देना अर्थात् बाहरी वेष और छापातिलक जटा जूट, को आध्यात्मिक उन्नति के लिए अनावश्यक समझते थे। मनुष्य का सम्मान वेष के कारण नहीं गुणों के कारण होता है। तुलसीदासजी ने एक स्थान पर लिखा है–किये हुकुवेश साधुसनमान'' अर्थात् सज्जन पुरुष साधारण वेष धारी होने पर भी सम्मान का पात्र होता है और यह उक्ति बाबा हजूर पर सटीक बैठती थी। उन्हें देखकर कोई कह नहीं सकता कि साधारण धोती कुरता जाकिटधारी ये कोई उँचे संत होंगे। लेकिन गुदड़ी के लाल की तरह वह आध्यात्मिक क्षेत्र की परम निधि को अपने हृदय के भीतर छुपाए हुए थे। विवेकानंद के आध्यात्मिक गुरुदेव स्वामी रामकृष्ण जिस प्रकार एक सामान्य से व्यक्ति दिखाई देते थे ठीक उसी प्रकार सामान्य लिवास में मानव मूल्यों के चरमोत्कर्ष हमारे हुजूर थे। वे संतों के लिए बाहरी वेशभूषा की अपेक्षा मानव मूल्यों को धारण करने पर अधिक जोर देते थे। उनके नतानुसार दया, नम्रता, अभिमान, शून्यता एवं सब प्राणियों में ऊँच नीच अच्छे बुरे का भाव न रखते हुये समभाव से सवका हित करने में लगे रहना सच्चे साधु का लक्षण मानते थे तथा समस्त जगत से राग द्वेष मोह ममता छोड़कर भगवान के भजन में अखण्ड भाव से लगे रहने वाले को वे सच्चा महात्मा मानते थे, उपर्युक्त गुणों के अभाव में माला-तिलक एवं बाह्य वेशभूषा मात्र से कोई साधु नहीं हो जाता कबीर के मतानुसार–

दोहा- *दया गरीबी वन्दगी, समता शील स्वभाव।*

एते लच्छन साधु के, कहै कबीर विचार॥

इस प्रकार बाबा श्री मनोहरदासजी महाराज एक साधु के लिए यह आवश्यक मानते थे कि वह मोह, ममता एवं दुर्गुण दुराचारों से दूर रहकर संसार के अपने क्रिया व्यवहार द्वारा शिक्षा दें। केवल बातों से उपदेश देना और स्वयं माया में लिप्त रहकर जगत को ठगते रहना साधु के लिए लज्जा एवं शर्म की बात मानते थे। वे स्वयं सदैव कंचन एवं कामिनी से दूर रहे ये दोनों अविद्या के अभिन्न अंग हैं, जो जीवन को सद्मार्ग से भटकाकर उसे पतनोन्मुख करते हैं। वे सच्चे साधु के लिए इन दोनों का त्याग आवश्यक मानते थे। जो साधु संतोषी और ब्रह्मचारी होता है वह भगवान को भी प्यारा होता है, क्योंकि उसने अविद्या को जीत कर महात्याग किया होता है, संसार के सभी साधकों का वह आदर्श होता है, वही सच्चा सद्गुरु'' कहलाने का अधिकारी हैं। ऐसे ही महान संतों की वाणी का उपदेशों का अपने अनुयायीयों पर अमिट प्रभाव पड़ता है–

दोहा- *गाँठ न दामहिं बाँधई, नहिं नारी सों नेह।*

कह कबीर वा साधु की, हम चरनन् की खेह॥

इस तरह हमारे गुरुदेव साधुता के लिए बाह्याडम्बरों की अपेक्षा साधु को साधुता के विभिन्न गुणों को धारण कर संसार को उस सच्चे मालिक से मिलने, के लिए उसके लिए भजन ध्यान करने की प्रेरणा देते थे, वे सभी धर्मों का आदर करते थे, उनके विचार साम्प्रदायिक धर्म और आध्यात्मक के क्षेत्र में समन्वयवादी थे। वे सभी धर्मों एवं सम्प्रदायों का ईश्वर की ओर ले जाने वाले कहाकर सभी का सम्मान करते थे। वे सभी सम्प्रदायों एवं धर्मों की एकता तथा सहअस्तित्व के समर्थक थे। उनके दरबार में सभी लोग चाहे वे हिन्दू, मुस्लिम, सिख या अव कोई भी क्यों न हो सम्मान पाते और बाबा के दर्शन पाकर परमशान्ति का अनुभव करते थे। उनकी धार्मिक सहिष्णुता एवं उदारता देखते ही बनती थी। प्रत्येक व्यक्ति चाहे वह किसी भी सम्प्रदाय का क्यों न हो उसे यह लगता कि बाबा का मेरे प्रति बहुत स्नेह है। बाबा मेरे ही है वस्तुतः बाबा सब के थे। उनके लिए ऊंच-नीच, गरीब और सभी समान थे। वे ''भाव'' के भूखे थे ''भाव गति'' का वे विशेष ध्यान रखते थे। उनसे किसी के हृदय की बात छुपी नहीं थी। बाबा ने धर्म के व्यावहारिक रूप को विशेष महत्त्व दिया, वे केवल वाचक ज्ञान की थोथी बातों को ठीक नहीं मानते थे। जिन बातों को अपने जीवन का अंग नहीं बनाते, सिर्फ विद्वता और मनोरंजन का आधार बनाया जावे, इन बातों से हमारा कोई अधिक भला नहीं होता। सार यह कि उन्हों करनी एवं कथनी का अन्तर पसंद नहीं था–

करनी बिन कथनी कथै अज्ञानी दिनरात।

कूकर ज्यों भौंकत फिरैं, सुनी सुनाई बात॥

बाबा का व्यक्तित्व सरल था वे कहने की अपेक्षा क्रियापक्ष को अधिक आवश्यक समझते थे संसार के धर्म ग्रन्थों में अनेकों अच्छो बातें लिखी हैं, लेकिन जब तक हम उन्हों अपने जीवन का अंग नहीं बनाते वे हमारा कोई हित नहीं कर सकती हैं। उन्होंने ज्ञान वैराग्य की कथाएँ अपने उपदेशों में न कहकर अपने जीवन में उतार कर दिखलाई थी। उनका जीवन गीता के कर्मयोग, भक्ति योग और सांख्य योग का व्यावहारिक रूप था। अपने मन बुद्धि और चित्त को हमेशा ईश्वर की आराधना (सुमरन ध्यान) में लगाये रखना तथा दीन दुखियों के दुःखों को दूर कर उन्हें सुखी करना, वे अपना कर्तव्य समझते थे। जो भी उनके पास आता वे उनके समस्त मनोरथों को पूर्ण करते थे। ज्ञान के साथ भक्ति और कर्मयोग को वे आवश्यक मानते थे। भक्ति बिना ज्ञान के शोभा नहीं पाती और कर्महीन का ज्ञान लज्जादायक है। जैसे बिना कर्णधार के जलयान नहीं शोभा नहीं पाता, ठीक उसी प्रकार बिना श्रद्धा और प्रेम के ज्ञानी की शोभा नहीं–

सोह न राम प्रेम बिन ज्ञानू

करनधार बिनु जिमि जलजानू॥

बाबा ने अपने जीवन चर्या के माध्यम से हमें यह शिक्षा दी कि कोरी किताबी

बातें और दाचक ज्ञान मनुष्य में अहंकार की ही वृद्धि करता है। प्रामाणिक ज्ञान वह होता है, जिसे अपने जीवन में उतारा जाए तथा जिसके द्वारा संसार का हित किया जावे। धारणा योग का अत्यावश्यक अंग है। बिना धारण के अन्तिम दृश्य ध्यान एवं समाधि की स्थिति प्राप्त नहीं की जा सकती। पुस्तकीय ज्ञान के माध्यम से हमें अपनी साधना की सफलता तब तक प्राप्त नहीं हो सकती जब तक कि हम उन बातों की प्रबल धारणा न करें। बाबा ने अपनी साधना की प्रारंम्भिक अवस्था में गीता जैसे महान ग्रन्थ का स्वाध्याय किया और उसमें बताए निर्देशों को अपने जीवन में धारणा की और सिद्धावस्था को प्राप्त किया। अपने जीवन में पुस्तक का आधार अवश्यक लिया लेकिन उसके बाद उन्होंने धारणा पर ही विशेष ध्यान दिया। वे अखण्ड इष्टदेव (गुरुदेव) के नाम का जप तथा ध्यान में मग्न रहा करते थे। वे कहा करते–

''गुरु-गुरु जपरे, यही तेरा तप रे''

''गुरु नाम सार है, और सब बेकार है।''

बाबा मे अपनी साधना में पुस्तकीय ज्ञान की अपेक्षा गुरु के ज्ञान गुरुदेव द्वारा बताए हुए तत्व रहस्य को विशेष फलदायी कहा। मनुष्य चाहे कितनी ही भाषाओं का विद्वान हो और चाहे कितने ही ग्रन्थों को कंठस्थ करले लेकिन बिना ''गुरु'' के ज्ञान सम्भव नहीं। बिना गुरु के जो भी साधना होगी उसका परिणाम अहंकार की वृद्धि ही होगी। इसलिए अपने जीवन में योग्य गुरुदेव की शरण होकर साधना करने पर सिद्धि प्राप्त अवश्य होती है यह उन्होंने अपने जीवन के द्वारा हमें शिक्षा दी। उनका कहना था कि ''गुरु'' के ज्ञान के वचन मंत्र समान होते हैं उनका प्रभाव श्रोता पर अमिट होता है, क्योंकि उसने गुरुदेव के ज्ञान की धारण अपने जीवन में स्वयं की हुई होती है–

ज्ञान कथा सीखी घनी, प्रश्न करै अति गूढ़।

नारायण बिनु धारणा, व्यर्थ बकत है मूढ़॥

अतः सद्य सन्त की कथनी से नहीं अपने व्यावहारिक ज्ञान द्वारा लोगों को सही मार्ग दिखाना चाहिए। सच्चा संत कभी किसी प्राणी को स्वप्न में भी पीड़ा नहीं देता वह दूसरे की पोड़ा समझ कर उस पर दया दिखलाता है। वह संसार के हित के लिए ही देह धारण करता है–

पर उपकार बचन मन काया।

सन्त सहज सुभाउ खगराया॥ (मानस उ.का.)

अर्थात् अपने मन, वचन एवं मर्म से सारे संसार का हित करना सन्तों का सहज स्वप्न ही होता है। हमारे गुरुदेव अपने सम्पूर्ण जीवन में तथा आज भी

जगत के जीवों का विविध प्रकार से कल्याण करते हैं। उनके दरबार में जो भी कोई, किसी भी कामना से आया उसकी मनोकामना सिद्ध की। इस पुस्तक के संस्मरण खण्ड को पढ़ने से यह भली-भाँति सिद्ध होता है कि किसी को भक्ति, किसी को शक्ति हमारे गुरुदेव पर यह उक्ति शत प्रतिशत खरी उतरती है–

अन्धेन को आँख देत कोटिन को काया।

बाँझन को पुत्र देत, निर्धन को माया॥

उन्होंने एक अन्धे की आँखों को ज्योति प्रदान की, एक कोढ़ी जो बाबा के यहाँ आया हुजूर ने उसकी काया को कंचन के सदृश्य शुद्ध कर दिया था। वह जघीना गाँव का रहने वाला हरिसिंह नाम का व्यक्ति था। जिसके सम्पूर्ण शरीर में कोढ़ी था सारे अंगों में मवाद बहती रहती थी हुजूर ने उसे प्रतापगंगा में स्नान कराया और छः महा के अन्दर उसकी काया शुद्ध कर दी (देखिए संस्मरण ''कोढ़ी को काया'') इस प्रकार अनेक लोगों को अपने आशीर्वाद से पुत्र प्रदान किये सैकड़ों लोगों को माला माल कर दिया। आज भी उनके दरबार में दूर-दूर से अपनी श्रद्धा एवं कृतज्ञता प्रकट करने के लिए भक्त जन आया करते हैं। जो भी भक्ति भाव से बाबा के सम्मुख अपनी प्रार्थना करता है उसे दे तदनुरुप ही पूरा करते हैं। वे सच्चे अर्थों में दाता थे। हुजूर बाबा की महिमा का वर्णन लघु काशी वैर के एक बुजूर्ग कवि स्व, श्री नत्थी लाल जी चौबे ने इस प्रकार किया है–

काहू को रिद्धी दई, काहू को सिद्धि बई। काहू को प्रसिद्धि दई, दानी मतवाले थे॥

बहुतक निहाल किये, बिगड़े बहाल किये, बहुतों के अंधेरे घर में कर दिये उजाले थे॥

मान मद दूर रहे भक्ति में चूर रहे, रख दिया जो नाम उसे भूलने न वाले थे॥

बाबा मनोहरदास कहाँ तक गुण-गान करुं, तुममें तो अनेकों गुण बड़े ही निराले थे॥

इस प्रकार उनकी महिमा का बखान अनेकों कवियों ने अपनी-अपनी भावनानुसार अनेक प्रकार से किया है लेनिक उनके सम्पूर्ण व्यक्तित्व को, उनके महान गुणों को, अपनी लेखनी का विषय वना सके ऐसा अब तक कोई भी कवि लेखक पैदा ही नहीं हुआ। वास्तविक तो यह है कि उन्होंने अपने गुणों का प्रदर्शन ही नहीं किया, वे सच्चे संत थे नारद भक्ति सूत्र में लिखा है–

मोदन्ते पितरो नृत्यन्ति देवताः, सनाथा चेयं भूर्भवति॥ (ना. भ. सू.)

ऐसे भक्तों का आविर्भाव देखकर पितरगण प्रमुदित होते हैं, देवता नाचने लगते हैं और यह पृथ्वी सानाथा हो जाती है।

॥ हरिः ॐ तत्सत् ॥ ॥ हरिः ॐ तत्सत् ॥ ॥ हरिः ॐ तत्सत् ॥

❑❑❑

अध्याय-17

॥ ॐ श्री गुरु परमात्मने नमः ॥

मनोहर दास जीवन-दर्शन

मनोहर उपदेश

(1)

केवल हरिनाम ही मधुर से भी मधुर, मंगलमय से भी मंगलमय और पवित्र से भी पवित्र है, केवल हरि का नाम ही सत्य है, जो सार्वदा हरिनाम स्मरण करना ही सिखलाता है वही गुरु है।

(2)

सन्त का देह ईश्वर का दर्पण होता है संतदर्शन ही
ईश्वर का साक्षात दर्शन होता है।

दोहा अलख पुरुष की आरसी, संतों का ही देह।
लखना चाहे अलख को, इनही में लख लेय॥

(3)

दयावान, अहंकार, शून्यता, ईश्वरचिन्तन में संलग्नता।
समत्वभाव तथा नम्र स्वभाव, संतों के प्रमुख लक्षण हैं॥

दोहा दया गरीबी बन्दगी, समताशील-स्वभाव।
एते लक्षण साधु के, कहै कबीर विचारि॥

(4)

जो धन का भूखा है वह साधु नहीं।

दोहा साधु भूखा भाव का धन का भूखा नाहिं।
धन का भूखा जो फिरे, वो तो साधु नाहिं॥

(5)

कंचन-कामिनी के त्यागी ही सच्चे साधु हैं–

दोहा गांठी दामं ना वाँधइ, नहिं नारी सों नेह।
कह कबीर ता साधु की, हम चरन की खेह॥

(6)

भोग और संग्रह का त्यागी ही सच्चा फकीर होता है–

दोहा उदर समाता अन्न ले, तनहि समाता चीर।
अधिकहिं संग्रह ना करहिं, ता का नाम फकीर॥

(7)

सच्चे फकीर (महात्मा) की आत्मा समस्त विश्व में व्याप्त होती है–

दोहा हद् तपै सो औलिया, अनहद तपै सो पीर।
हद-अनहद दौनों तपै, ता का नाम फकीर॥

(8)

जो पराई पीड़ा को समझाता है वही सांचा साधु है।

जिसमें परदुःख कातरता नहीं वह सच्चा साधु नही।

दोहा कबिरा सोई पीर है, जो जानत पर-पीर।
जो पर पीर न जानइ, सो काफिर बेपीर॥

(9)

परमहंस सच्चा संत, नीर क्षीर विवेकी तथा तत्ववेत्ता होता है।

दोहा छोर रूप संतनाम है, नीर रूप व्यवहार।
हंस रूप कोई साधु है, तत्व का छाननहार॥

(10)

साधु के मुखार्विन्द से अमृत वचन पुष्प झरते हैं वह कटुभाषी नहीं होता।

दोहा साधु भया तो क्या भया, बोलत नहीं विचारी।
हनै पराई आत्मा, बाँधि जीभ तरवारि॥

(11)

सरल स्वभाव और निष्कपट भगवद् भक्त की नथ्या भगवान स्वयं पर लगाते हैं–

दोहा कपट भाव मन में नहीं, सब सन सरल स्वभाव।

नारायन ता भगत की लगी किनारे नाव॥

(12)

हरि भक्त को पाँच बात अच्छी नहीं लगती, वह इनको साधना में विघ्न कारक समझ कर त्याग कर देता है–

दोहा विषय भोग निन्द्रा हँसी, जगत प्रीति वहु बात।
नारायन हरि भगत को, ये पाँचों न सुहात॥

(13)

जिन विषय भोगों को संतों ने अमंगल कारी जान कर तज दिया मूर्ख लोग ही उनमें अनुरक्त होते हैं–

दोहा जो विषया संतन तजी, मूढ ताहिं लपटात।
ज्यों नर डारत बमनकरि, स्वान स्वाद सों खात॥

(14)

कुमति से भरे बुद्धि हीनों पर सतसंग का प्रभाव भी नहीं पड़ता है–

दोहा संगत समुति न पावहिं, भरे कुमति के धंध।
राखो मेलि कपूर में, हींग न होय सुगंन्ध॥

(15)

कामी, क्रोधी और लोभी इनसे भक्ति नहीं हो सकती, ये तीनों नरक के अधिकारी हैं–

दोहा कामी, क्रोधी लालची, इन से भक्ति न होय।
भक्ति करै कोइ सूरमा, जाति वरन कुल खोय॥

(16)

ईश्वर तेरे भीतर है जैसे तिल में तेल और चकमक में अग्नि अदृश्य होकर रहती है, उसी प्रकार भगवान घट-घट में निवास करते हैं।

दोहा ज्यों तिल माहीं तेल है, चकमक माहीं आग।
तेरा सांई तुज्झ में, जाग सकै तो जाग॥

(17)

जब तक संसार से कोई ममता है तब तक तू संसार का भक्त है

जब संसार से नाता तोड़ देगा तभी हरिभक्त होगा।

दोहा जब लगि नाता जगत का, तब लगि भक्ति न होय।

नाता तोडि हरि भजै, भक्ति कहावै सोय॥

(18)

दया धर्म की जननी है, पाप का बाप लोभ है, क्रोध काल का कारण है तथा जहाँ क्षमा है तहाँ स्वयं भगवान हैं–

दोहा जहाँ दया तहँ धर्म है, जहाँ लोभ तहँ पाप।

जहाँ क्रोध तहँ काल है, जहाँ क्षमा तहँ आप॥

(19)

भगवद् भक्ति में दिखावा नहीं होता–

दोहा बाहर क्या दिखलाइये, अन्दर जपिए नाम।

कहा काज संसार से, तुझे धणी से काम॥

(20)

इस नश्वर देह का क्या भरोसा साथ छोड़ दे, अतः प्रत्येक सांस पर हरिनाम स्मरण करो।

दोहा कहा भरोसा देह का विनसि जात छन मांहि।

सांस सांस सुमिरन करो, और जतन कछु नांहि॥

(21)

जिसका राम नाम ही आधार है वह अमर हो जाता है–

दोहा वैद्य मुआ रोगी मुआ, मुआ सकल संसार।

एक कबीरा न मुआ, जेहि के राम आधार॥

(22)

जो माया से दूर भागता है, वह उसके पीछे भागती है और

जो माया के पीछे दौड़ रहे हैं, माया उनके हाथ नहीं आती

दोहा माया छाया एक सी, विरला जानें कोय।

भागत के पीछे लगे, सन्मुख भागें सोय॥

(23)

जो स्वयं माया के जाल में बँधे पड़े हैं, उनसे मुक्ति दिलाने की आशा करना मुर्खता है, जो स्वयं मुक्त है उन्हीं की शरण लो।

दोहा बँधे को बँधना मिलें, छूटे कौन उपाय।

कर संगत निर्बन्ध की, पल में देय छुड़ाय॥

(24)

तत्वेता पूर्ण ज्ञानी गुरुदेव की शिष्यता मोक्ष - दायिका होती है

अन्धे को अन्धा क्या राह दिखला सकता है।

दोहा जानता बूझा नहीं, बूझि किया नहीं गौन।

अन्धे को अन्धा मिला, राह बतावै कौन॥

(25)

दुविधा ग्रस्त जीव को न तो माया ही मिलती है और न ही राम ही।

दोहा राम नाम कड़ुबा लगै, मीठा लागै दाम।

दुविधा में दोउं गये, माया मिली न राम॥

(26)

जहाँ संत और भगवान की पूजा नहीं होती वे घर श्मसान के समान हैं, उनमें रहने वाले भूत-प्रेत के समान हैं।

दोहा जेहि घर साधु न पूजिए, हरि की सेवा नांहि।

ते घर मरधट सारिखे, भूत वसहिं तिन मांहि॥

(27)

सच्ची शुद्धता मन का राग द्वेष रहित होना है, केवल स्नान से बाहरी शरीर ही शुद्ध होता है, आन्तरिक शुद्धता ही साधना के लिए आवश्यक है।

दोहा न्हाये धोये का भया जों मन मैल न जाय।

मीन सदा जलमें रहे, धोये बास न जाय॥

(28)

मन मुखी सारा संसार है गुरु मुखी कोई विरला ही है,

मन मुखी होकर रहना ही अद्योगति का कारण ही है।

दोहा मन के मते न चालिए, मन के मते अनेक।

जो मन पर असबार है, सो साधु कोई एक॥

(29)

प्रेम हरि का रूप है वह सर्वस्व अर्पण, अनन्य शरणागति से ही प्राप्त होता है।

दोहा प्रेम न खेती नीपजै, प्रेम ने हाट विकाय।

राजा परजा जेहि रुचै, सील देय लै जाय॥

(30)

दूसरों के गुणों में भी अवगुण खोजने वाले नीच होते हैं

पर दोषदर्शनवृत्ति उत्तम पुरुष का लक्षण नहीं

दोहा गुन में अवगुन खोजहिं, जो प्रकृति के नीच।

ज्यों जूही के बाग में शूकर खोजे कीच॥

(31)

श्रीराम एवं श्रीकृष्ण दोनों एक ही अखिल ब्रह्माण्ड नायक परस्पर ब्रह्म के दो रूप हैं–

दोहा नंद सुवन दशरथ कुंवर, उमै एक सरकार।

नारायण जो दो कहें, सो अविवेक विचार॥

राम कृष्ण दोउ एक हैं, रंग रूप वपु वेश।

उनके दृग गंभीर हैं, इनके चपल विशेष॥

(32)

कृष्ण नाम और कलियुग की एक ही राशि है, कृष्ण-कृष्ण जपने से कलियुग पास नहीं फटकता

दोहा कलयुग की अरु कृष्ण की, पड़ी एक ही रास।

कृष्ण-कृष्ण जपते रहो, कलि नहीं आवै पास॥

(33)

प्रेम पवन के प्रसंग से पापी जीव भी उत्तम लोकों को प्राप्त होकर

परमात्मा में लीन हो जाता है।

दोहा उठा बगूला प्रेम का तिनका उड़ा अकाश।

तिनका तिनका से मिला, तिनका तिनके पास॥

(34)

"साधुता बड़ी कठिन साधना के परिणाम स्वरूप प्राप्त होती है, साधुता से गिरने वाला कहीं का नहीं रहता।

दोहा साधु कहावत कठिन है, लम्बा पेड़ खजूर।

चढै तो पावे प्रेमरस, गिरै तो चकनाचूर॥

(35)

जिस प्रभु का हृदय में निवास है, उससे दुःख-सुख की कहने की क्या आवश्यकता है, वे सब कुछ जानन हार हैं।

दोहा जे रहीम तन मन दियौ, कियौ हिये विच मौन।

तासौं दुःख सुख कहन की रही बात अब कौन॥

(36)

मनुष्य को विपत्ति में रोना-घबराना नहीं चाहिये, सोचो जिसने माता के गर्भ में रक्षा की क्या वही भगवान अब सो गये हैं?

दोहा रन बन व्याधि विपत्ति में, रहिमन मरिये न रोय।

जेहि रक्षक जननी जठर, सो प्रभु गया कि सोय॥

(37)

जिस ब्रजराज के स्पर्श मात्र से चारों प्रकार की मुक्ति प्राप्त होती है, उसी ब्रज को रोजाना गोपियाँ झाड़ बुहार कर फैंक देती हैं वे तो कृष्ण की दीवानी है।

दोहा जा ब्रजरज की परस से मुकुति मिलत है चारि।

वा रजको नित गोपिका, डारत डगर बुहारि॥

(38)

परम ज्ञानी एवं परम मुर्ख दोनों को उपदेश देना ठीक नहीं।

दोहा ज्ञानी ते कहिये कहा, कहत कबीर लजाय।

अन्धे आगे नाच कर, कला अकारथ जाय॥

(39)

तनरूपी तम्बूरे से जो आवाज निकल रही है, ये सब भगवान् की ही अमर कल्याणकारी आवाज है–

दोहा तनतम्बूरा तारम, अद्भुत है यह साज।

हरि के कर से बज रहा, हरि की है आवाज।

(40)

पुस्तकें पढ़ने से कोई पंडित नहीं बन जाता सच्चा पंडित सत्य, अहिंसा ज्ञान तप और नम्रता का आगार होता है।

दोहा सत्य अहिंसा ज्ञान तप, विनय शील जो होय।

ताको बुध पंडित कहें, पाछे न पंडित होय॥

(41)

जो मन के विकारों पर विजय प्राप्त कर ले सच्चा मर्द वही है।

दोहा मर्द न वो करते जिसे, मर्दन मनो विकार।

मर्द वही जिसने किये, मर्दन-मनो-विकार॥

(42)

जो अपने सेवक धर्म को कुशलतापूर्वक निर्वाह करता है उस सेवक को स्वामी से भी महान् कहा गया है।

दोहा स्वामी से सेवक बडौ, जो निज धरम सुजान।

रिणियाँ राजा राम भजे, धनी भये हनुमान॥

(43)

मनुष्य शरीर पाकर जिसने परोपकार नहीं किया उससे तो स्थावर योनि वृक्षादिक ही श्रेष्ठ हैं–

दोहा जो मानस तन पायकें, करैं न पर उपकार।

तासों वृक्षादिक भले, जो पोसे संसार॥

(44)

ज्ञान के साथ अगर अभिमान है तो वह ग्रहण करने योग्य नहीं पवित्र भोजन भण्डार को अपवित्र और अग्रहय बनाने को एक छोटी

सी मल की छींट ही पर्याप्त होती है, अभिमान भी मल की छींट ही है।

दोहा लाख ज्ञान उरमें वसा, यदी कछू अभिमान।
भोजन के भण्डार में, मल की छींट समान॥

(45)

जिसमें नम्रता होती है उसकी संसार पूजा करता है, अभिमानी से कोई प्रीति नहीं करता।

दोहा सवते लघुताई भली लघुता से सब होय।
जस दुनिया के चन्द्र को, शीश नवे सब कोय॥

(46)

अगर मन से आशा न गई तो कोरा आसन लगाने से कुछ भी नहीं होता। तेली का बैल दिन भर चलता है लेकिन पहुँचता कहीं नहीं

दोहा आसन मारे क्या भया, मुइ न मन की आस।
ज्यो तेली के बैल को, घर की कोस पचास॥

(47)

जिसने विषय रस का परित्याग कर दिया है और राम स्नेह में अपने मन को चिकना बना लिया है चाहे वह घर में रहता हो या घोर जगल में।

दोहा जे जन रूखे विषय-रस चिकने राम स्नेह।
ते प्यारे श्री राम को, कानन वसौ कि गेह॥

(48)

गुरुदेव की चार पल की सेवा ही अपार कल्याणकारी होती है।

दोहा हरि सेवा सोलह बरस, गुरु सेवा पल चारि।
तो भी नहीं बराबरी, संतन किया विचारी॥

(49)

प्रारबन्ध के भोग को ज्ञानी हँसी खुशी भोगते हैं और मूर्ख कठिन प्रारम्भ को रो पीट कर भोगते हैं।

दोहा देह धरे का दण्ड है, सब काहू को होय।

ज्ञान भुगतै ज्ञान कर, मूरख भुगतै रोय॥

(50)

जैसे घी दूध में सर्वत्र व्याप्त होते हुये भी स्पष्ट दिखाई नहीं देता उसी प्रकार संसार में भगवान सर्वत्र व्याप्त हैं। जिस प्रकार मन्थन करने पर घी प्राप्त होता है। उसी प्रकार संत भजनरूपी मन्थन कर प्रभु प्राप्त करते हैं।

दोहा घीव दूध में रमि रहा, व्यापक सबही की ठौर।

दादू बकता बहुत हैं, मथि काढैं ते और॥

(51)

मन लगाकर दृढ़ता से भजन करने वाले भक्त भगवान नारायण को अपने बस में कर लेते हैं।

दोहा रहिमन मनहि लगाय कें, देख लेओं किन कोय।

नर को बस करिवौ कहा, नारायण बस होय॥

(52)

मन तो दर्पण के समान है जैसा विचार होता है मन भी उसी के समान आकार ग्रहण कर लेता है, अगर मन से ब्रह्म विचार किया जाये तो यह स्वयं ब्रह्म स्वरूप हो जाता है-

दोहा जो मन नारि की ओर निहारत, तो मन होत है नारि को रूपा।

जो मन काहू पै क्रोध करै, तब क्रोध भई है जाय तद्रूपा॥

जो मन माया ही माया रटै नित, तौ मन डूबत माया के कूपा।

सुन्दर जो मन ब्रह्म विचारत, तौ मन होत है ब्रह्म स्वरूप॥

॥ हरिः ॐ तत्सत्॥ ॥ हरिः ॐ तत्सत्॥ ॥ हरिः ॐ तत्सत्॥

❑❑❑

अध्याय-18

॥ ॐ श्री गुरु परमात्मने नमः ॥

बाबा मनोहरदास जीवन-दर्शन

सत्यलोक प्रस्थान

"हुजूर अब ये वस्त्र जीर्ण हो गया है इसको बदल डालो और सत्यलोक को प्रस्थान करो।" इस बात को सुनकर बाबा ने कहा कि "हम सत्यलोक में ही बैठे हैं, और सत्यलोक से ही बोल रहे हैं।"

(संस्मरण संख्या - 20)

अगहन सुदी पंचमी सांय 5 बजे तदनुसार 16-12-1958 संम्वत् 2016 की उपर्युक्त वार्ता है श्री देवी राम तहसीलदार ने बाबा की कृशकाया को देखकर उनसे अपने कायारूपी वस्त्र को छोड़ने की बात कही। लेकिन हुजूर ने जो उन्हें जवाब दिया उससे यह स्पष्ट होता है कि वे इस मृत्युलोक में रहते ही न थे, उनका शरीर यहाँ दिखाई पड़ता था लेकिन वे हमेशा सत्यलोक में ही निवास करते थे। इस घटना के ठीक दूसरे दिन अर्थात् अगहन सुदी षष्टमी मंगलवार संम्वत् 2016 तदनुसार 16-12 1958 को प्रातः पाँच बजे उन्होंने अपने नश्वर शरीर को भी इस धरा धाम पर छोड़ दिया क्योंकि इस शरीर को एक न एक दिन सब को छोड़ना ही पड़ता है जैसे जीर्ण वस्त्र को त्यागकर मनुष्य नवीन वस्त्र पहन लेता है, ठीक उसी प्रकार जीवात्मा भी इस पुराने शरीर को त्यागकर नये शरीर को ग्रहण कर लेती है–

वासांसि जीर्णानि यथा विहाय

नवानि गृहाति नरोऽपराणि।

तथा शरीराणि विहाय जीर्णा

न्यन्यानि संयाति नवानि देही॥

अर्थात् - जैसे मनुष्य पुराने वस्त्रों को त्यागकर दूसरे नये वस्त्रों को ग्रहण करता है वैसे ही जीवात्मा पुराने शरीरों को त्यागकर दूसरे नये शरीरों को प्राप्त होत है। आत्मा का ना तो जन्म होत है और ना आत्मा मरती ही है। यह शरीर ही जन्मने तथा मरने वाला है, जो जन्मता है उसकी मृत्यु अवश्य होती है। जब राम और कृष्ण जैसे अवतारों ने अपना शरीर छोड़ने की लीला को तो फिर इस संसार में किसका शरीर अमर होगा। अतः प्रकृति के नियम को कैसे उल्लंघन किया जा सकता है

जातस्यहि ध्रुवो मृत्यु

ध्रुवं जन्म मृतस्य च।

इस मृत्युलोक में जो जन्मा है उसकी मृत्यु निश्चित है यह अटल नियम है।

दोहा- *आया है सो जायगा राजा रंक-फकीर।*

एक सिंहासन चढ़ चला, एक बँधे जात जंजीर॥

मरने के पश्चात् इस लोक एवं परलोक में कर्मानुसार गति होती है। जो जैसा कर्म करता है उसे उसका परिणाम अवश्य भोगना होता है।'' अवश्यमेव भोक्तव्यं कृतं कर्म शुभा शुभम।''

श्री श्री 1008 श्री बाबा मनोहर दास जी महाराज तो जीवन्मुक्त महान् आत्मा थे वे आज भी अपने प्रिय भक्तों के साथ हैं क्यों कि आत्मा अविनाशी है उसका किसी काल में नाश नहीं होता। आत्मा न जन्म होती है और न उसकी मृत्यु ही है, वह सदा सर्वदा एक रूप है–

न जायते म्रियते कदाचिन, नायं भूत्वा भविता वा न भूयः।

अजो नित्यः शाश्वतोऽयं पुराणो, नहन्यते हन्यमाने शरीरे॥ (गीता 2/20)

भगवान का कथन है कि ये आत्मा किसी काल में भी न जन्मता है और न मरता है अथवा न यह आत्मा हो करके फिर होने वाला है क्योंकि यह अजन्मा नित्य शाश्वत और पुरातन है शरीर के नाश होने पर भी यह नाश नहीं होता है।

भगवान के उपर्युक्त कथन से यह स्पष्ट होता है कि हमारे बीच से बाबा महाराज का देह ही पंच भूतों में लीन हुआ है, वे स्वयं आत्मा रूप से हमारे पास ही हैं। आज लघुकाशी के बीच भगवान के समान उसकी पूजा अर्चना यह स्पष्ट करने में सक्षम है कि उनकी तपस्या उनकी साधना झूठी एवं कोरा दिखावा मात्र न थी अब रोज हजारों मस्तक उनके मंन्दिर की देहरी पर झूकते हैं। यह उनके कर्म का परिणाम है। उनकी महिमा का बखात कर सकूँ ऐसी क्षमता मेरी कलम और मेरी तुच्छ बुद्धि में कहाँ। हाँ राष्ट्र कवि मथलीशरण गुप्त की कुछ काव्य पंक्तियाँ उनके अलौकिक व्यक्तित्व को प्रकट करने के लिए उद्धृत करना चाहूँगा–

उनके अलौकिक दर्शनों से दूर होता पाप था।

अति पुन्य मिलता था तथा, मिटता हृदय का ताप था।

उपदेश उनके शान्ति कारक थे, निवारक शोक के।

सब लोक उनका भक्त था वे थे हितैषी लोक के॥ (भारतभारती)

❀❀❀❀

लखते न अध की ओर थे वे, अध ने लखता था उन्हें।

वे धर्म को रखते सदा थे, धर्म रखता था उन्हें॥

वे कर्म से ही कर्म का थे, नाश करना जानते।

करते वही थे वे जिसे, कर्तव्य थे वे मानते॥

❀❀❀❀

वे सजग रहते थे सदा दुःख पूर्ण तृष्णा भांन्ति से।

जीवन बिताते थे सदा सन्तोषपूर्वक शान्ति से॥

❀❀❀❀

इस लोक में उस लोक से, वे अल्प सुख पाते न थे।

हंसते हुये आते न थे, रोते हुये जाते न थे॥

(राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त (भारत भारती से))

हुजूर के सत्यलोक प्रस्थान से सम्बन्धित विस्तृत ब्यौरा इस पुस्तक संस्मरण खण्ड के संस्मरण 20 में दिया गया है। अतः यहाँ पर उनके महा प्रस्थान सम्बन्धी संक्षित विवरण ही प्रस्तुत किया गया है। अधिक जानकारी के लिए इसी पुस्तक के संस्मरण संख्या 20 को देखा जा सकता है।

॥ हरि : शरणम् ॥

॥ ॐ श्री गुरु देवाय नमः ॥

मनोहर महिमा अष्टपदी

हुजूर बाबा श्री श्री 1008 श्री मनोहर दास जी के सत्यलोक प्रस्थान के पश्चात् हुए कवि सम्मेलनों एवं लोक संगीतों में उनकी महिमा का बखान किया गया हमारे वैर के ही निवासी स्व. पं. नत्थीलाल जी चौबे द्वारा रचित अष्टपदी निम्नांकित है–

॥ ॐ॥

दोहा *अगहन शुक्ला षष्टमी, सुदिन सुमंगलवार।*

दो हजार पन्द्रह विसे, पहुँचे स्वर्ग मझार॥

(1)

बड़े-बड़े संत आये, बहुत से महन्त आये,

सबने सिर नाये, आप अलख दरबार में।

जाने कौन लाता था, जाने कौन खाता था,

जाने कौन चुकाता, खाता जाकर बाजार में॥
लाखों ही पड़े रहे, लाखों ही अड़े रहे।
लाखों ही खड़े रहे, संग वीहड़ उजाड़ में
बाबा मनोहर दास, वैर की विभूति थी,
ऊँनी नहिं आई कभी उनके भण्डार में॥

(2)

काहू कूँ रिद्धि दई, काहू कूँ सिद्धि दई।
काहू कूँ प्रसिद्धि दई, दानी मतवाले थे॥
बहुतक निहाल किये बिगड़े बहाल किये,
बहुतों के अन्धेरे घर में कर दिये उजाले थे॥
मान मद दूर रहे, भक्ति में चूर रहे,
रख दिया जो नाम उसे भूलने न वाले थे॥
बाबा मनोहर दास कहाँ तक गुणगान करूं,
तुम में तो अनेकों गुण, वडे, बड़े ही निराले थे।

(3)

ब्रह्म वेद ज्ञानी थे, ईश्वर के ध्यानी थे।
नहीं अभिमानी थे, भक्ति में चूर थे॥
बाल ब्रह्मचारी थे, दीन दुःखहारी थे।
प्रेम के पुजारी बाबा, तृष्णा से दूर थे॥
काहू को काया दई काहू को माया दई।
पूछा जो बताया प्रश्न, हाजर-हुजूर थे॥
बाबा मनोहर दास कहाँ तक बखान करूँ
सर्व गुण दाता आप विद्या, भरपूर थे॥

(4)

ओम ओम जपते और धूनी सटां रमते थे,
अलख पुरुष मूर्ति का, जबर एक नारा था।

साधा था पूर्ण योग, त्यागे थे विषय भोग,
तुमने मोह-लोभादि, प्रबल शत्रुओं को मारा था।
योगी-यति जती-सती, काहू की न पहुंची मती,
अलवेले गुरु का छिपा ज्ञान न्यारा था।
बाबा मनोहर दास बस्ती कर सूनी गये,
संत मण्डली का यहाँ चमकता सितारा था।

(5)

आये थे जब से वैर बस्ती में आनंद भये,
आधि व्याधि संकट हटाये, सुख पाये थे।
पाये थे सेवकों ने, सदा मन चीते फल,
था न दूजा काम, सदा भगवत् गुण गाये थे॥
गाये थे गीत प्रेम रस के, आनंद भये,
अनेकों करिश्में सदा हँस-हँस दिखाये थे।
खाते थे प्रेम से गरीबों के सूखे-रोट,
बहुतों के हलुओं मोहन-भोग छोड़ आये थे॥

(6)

अलख-अलख कहते रहे, मानें न किसी की दाव,
साधा था पूरा योग, ब्रह्म वेद ज्ञानी थे।
ज्ञानी थे ऐसे पार पाया न किसी ने भी,
योगी-यति, जती-सती, हरि ब्रह्मज्ञानी थे॥
ध्यानी थे हरी के, मान-ममता से दूर रहें।
सबके शुभ चिन्तक भक्ति-शक्ति के दानी थे।
दानी थे दयाल थे, दीनों के दुःख हरन्-हार,
बाबा मनोहर दास सर्वगुण खानी थे॥

(7)

बाबा की सुन्दर समाधि सुखदाई बनी,

चन्दा देनदारों की भीड़ भई भारी है।
पास पुस्तकालय और औषधालय बना हुआ,
अनौखी डिजायन फुल वारी की निकारी है।
भागवत गीता रामायण के पाठ होते रहें,
बैठें रहें भक्त लोग भक्ति लिए भारी हैं।
नारायण दास जी की आस गुरुदेव पूजै,
सुबह-शाम आठौ पहर विनय यह हमारी है॥

(8)

पास में प्रताप गंगा भरी रहै वारहोंमास,
नहामें जन जिनके, सदा संकट हरे रहैं।
साधु संत यति-सती, आते हैं अनेकों यहाँ,
दर्शन गुरुदेव के करके हरे रहैं॥
कहीं धर्मशाला कहीं बनी पाठशाला,
यहाँ भक्त लोग मन में शुद्ध भावना भरे रहैं।
नारायण दास जी ने सर्व आनंद कीनौं,
जय हो गुरुदेव की, ध्यान पर धरे रहैं॥

दोहा *संत मनोहर दास कौ, अष्टक पढै जो नित्य।*
मनो कामना पूर्ण हो, रहे शान्त निज चित्त॥

॥ हरिः ॐ तत्सत् ॥ ॥ हरिः ॐ तत्सत् ॥ ॥ हरिः ॐ तत्सत् ॥

❑❑❑

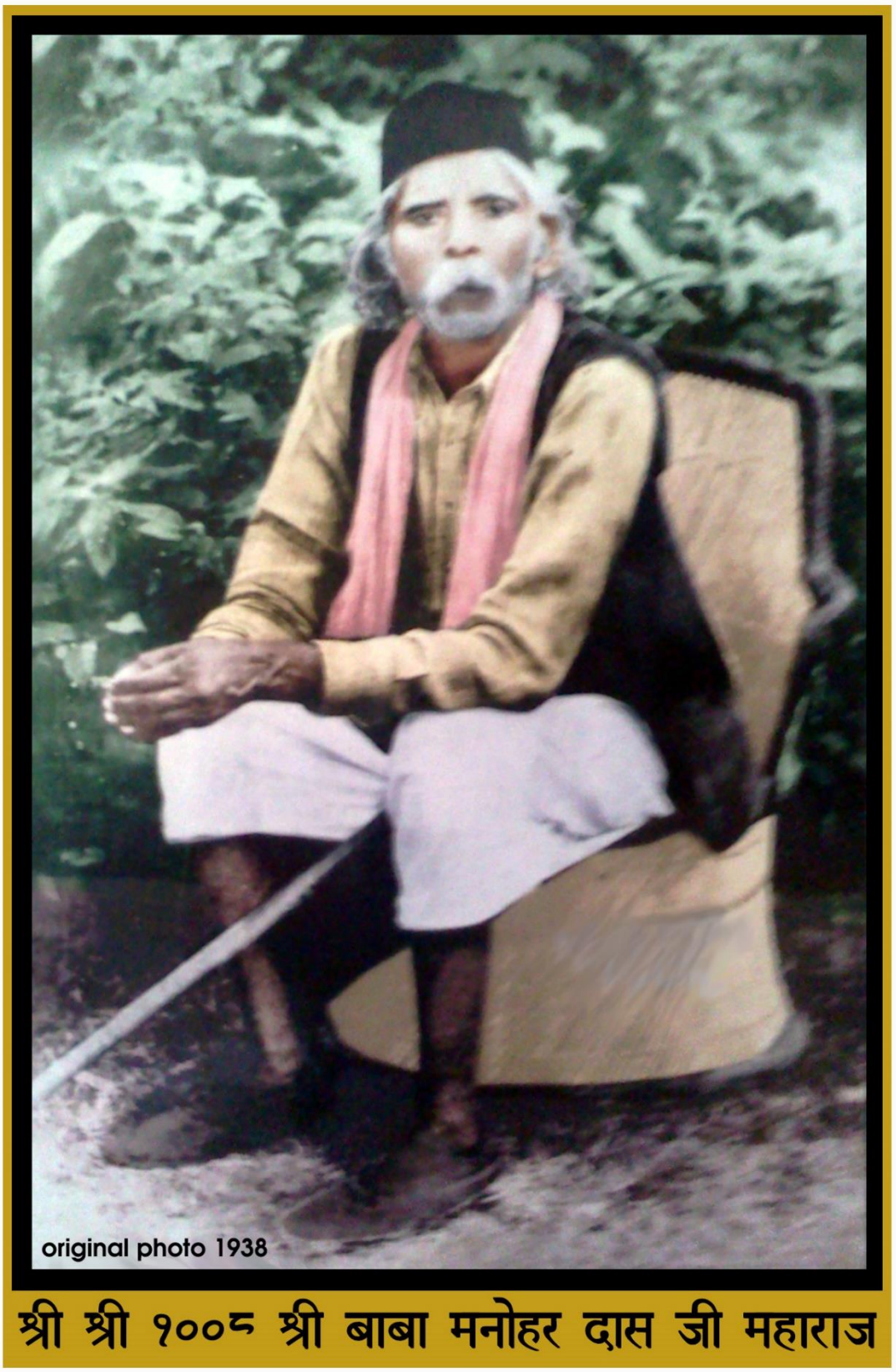

श्री श्री १००८ श्री बाबा मनोहर दास जी महाराज